मोजरका द्वीप (स्पेन)
५ अप्रील, २००६

संदेश संख्या – ६०

दो पुरोहितों की अद्‌भुत वार्ता

शिवेन्दु का शरीर सायटिका के कारण बहुत तकलीफ में है, फिर भी पूर्वनिर्धारित सम्मेलन, दीक्षा एवं पुनरावलोकन कार्यक्रम सभी जगह बिना किसी रुकावट के अनवरत रूप से जारी है । अंग्रेजी नहीं बोलने वाले इन देशों में ये कार्यक्रम अनुवाद के कारण कई घंटों तक चलते हैं फिर भी बिना किसी बाधा के सभी कार्यक्रम हो रहे हैं । दीक्षा–सत्र के दौरान शायद इस शरीर के इन्द्रियों का मानसिक–गतिविधियों के उलझन से अस्थायी संबंधविच्छेद हो जाता है जिससे इन्द्रियजन्य प्रत्यक्ष बोध (जीवन) अपनी समझदारी की ऊर्जा के साथ इस शरीर का स्वामी बन जाता है । इस सुन्दर द्वीप पर कार्यक्रम के प्रारम्भ के पूर्व शिवेन्दु को कुछ विश्राम मिल जा रहा है और मेजबान द्वारा काङ्गी देखभाल भी किया जा रहा है । इस कारण मेजबान के साथ स्वतःस्फूर्त सत्संग (मानव–शरीरों द्वारा आपस में प्रज्ञा की साझेदारी न कि भक्तिगीतों का बार–बार गाया जाना) का अवसर मिल जाता है ।

आज ऐसे ही एक सत्संग के दौरान मेजबान द्वारा पूछे गए प्रश्न के उत्तर देने के क्रम में शिवेन्दु को दस वर्ष पूर्व इटली के बोल्जानो जिला के मेरानो (मिलानो नहीं) नामक स्थान में हुए एक अद्‌भुत बातचीत की याद आ गई । मेरानो के कुछ श्रद्धावान उस बातचीत के दौरान उपस्थित थे और शायद वे मेरी उस बातचीत का बुरा मान गए और शिवेन्दु से दूर चले गए । परन्तु उनमें से एक आज भी भक्ति (मन का द्वन्द्व एवं भ्रांति नहीं) की अत्यधिक ऊर्जा एवं समझदारी के कारण शिवेन्दु के साथ है । वही बाद में पूरे यूरोप का समन्वयकर्त्ता (को–ऑर्डिनेटर) बना । वह अपने श्रमसाध्य कार्य के कारण अत्यधिक व्यस्त रहता है और उसे अपने परिवार जिसमें उसकी पत्नी, तीन बच्चे और बूढ़ी माँ हैं; के प्रति दायित्व भी निभाना होता है। इतनी व्यस्तता के बावजूद वह इस वेबसाइट को भी चलाता है । शिवेन्दु की कोई संस्था नहीं है।

किसी ने मेरानो में एक कट्टर कैथोलिक पुरोहित के संग साक्षात्कार की व्यवस्था करा दी थी । वह पुरोहित अपने चर्च के एक अन्य पुरोहित को भी साथ लाया था ताकि शिवेन्दु को डराने में वह उसकी मदद कर सके। स्पतः यह सब पूर्व नियोजित था। शिवेन्दु (जन्म से ब्राह्मण–शरीर एवं भारतीय पुरोहित) का एक दूसरे पुरोहित (इटली का कैथोलिक शरीर) के साथ वार्ता हुई। पिछले दस वर्षों में शिवेन्दु ने शायद ही कभी इस बातचीत की चर्चा की हो क्योंकि वह प्रसिद्धि का आकांक्षी नहीं किन्तु अब ऐसा लगता है कि क्रियावान इस सम्भाषण को जानना चाहेंगे। यह अच्छा है कि शिवेन्दु के शरीर की स्मृति ठीक से काम कर रही है और वह किसी मताग्रह एवं मानसिक उपद्रव में नहीं फँसा है। इसलिए वह इस बातचीत को संक्षेप में प्रस्तुत कर सकता है । इस बातचीत में भाग लेने वालों को 'वाराणसी पुरोहित' (वा.पु.) तथा 'स्थानीय पुरोहित (स्था.पु.) के रूप में कहा गया है और ऐसा व्यक्तित्व के परिहार हेतु किया गया है क्योंकि व्यक्तित्व अहंकार का ही एक अच्छा नाम है।

स्था. पु. (अपनी तर्जनी को वा.पु. की ओर दिखाकर)–''क्या आप हिन्दू है ?''

वा. पु. – ''हाँ, जन्म से मैं हिन्दू हूँ ।''

स्था. पु. – (ऊँची आवाज में) – ''आप नर्क जायेंगे ।'' (उनकी विश्वास पद्धति कहती है कि गैर–ईसाई लोग सामान्यतः नर्क जाते हैं) ।

वा.पु.–(मुस्कराकर) – ''मैं तो नर्क में हूँ ही । मैं भारत से आया हूँ जो अपनी निर्धनता एवं अकिंचनता के बावजूद स्वर्गिक वैभव से सम्पन्न है किन्तु आपके देश की सम्पन्नता एवं आधुनिक जीवन–शैली के बावजूद मैं जिस भयंकर विश्वास–पद्धति को झेल रहा हूँ, उसके कारण मैं इसी समय यह महसूस करता हूँ कि मैं नर्क में हूँ । आपलोग पवित्र–यीशु को समस्त मानवता का उद्धारक न मानकर केवल चर्च जानेवाले ईसाइयों का ही उद्धारक बनाकर उन्हें एक माफिया–नेता क्यों बना देते हैं ?''

स्था. पु.–(लज्जित होकर) –''यदि यह देश आपके लिए नर्क है तो आप यहाँ आये क्यों हैं ?''

वा.पु.–''क्योंकि, मेरे द्वारा दीक्षित इटली के क्रियावानों ने मुझे यहाँ आमन्त्रित किया है और वे समझ चुके हैं कि यीशु एक प्राच्य–योगी थे न कि पाश्चात्य पाखण्ड । क्रूस योग का ही प्रतीक है । उसमें आकार में बड़ी खड़ी रेखा अंग्रेजी अक्षर मखफ यानी 'मैं' को इंगित करती है और क्षैतिज रेखा उसे काटती है। यही योग का सार–तत्व है। शरीरस्थ चेतना में घटित विभाजन अर्थात् 'मैं' को चेतना के अन्य अवयवों से पृथक सत्ता–केन्द्र मानना अैर उसके परिणामस्वरूप मानवीय संबंधों के प्रत्येक स्तर पर (चाहे वह व्यक्तिगत हो या पारिवारिक या सामाजिक या राष्ट्रीय या (अन्तरराष्ट्रीय) उत्पन्न द्वैत और द्वन्द्व से मुक्ति ही योग है। ''मैं'' और ''ईश्वर'' के रूप में जो चरम द्वैत है, उसके कारण यह 'ईश्वर' इस भ्रांति 'मैं' के प्रोत्साहन एवं वर्धन का एक और मार्ग बन जाता है और फिर यह 'मैं' ईश्वर के नाम पर अपने चरम तुष्टीकरण, लोभ, अपराधबोध, एवं अपराधबोधग्रस्तता में फँसा रहता है। यह ''ईश्वर'' ''मैं'' की ही कल्पना है और इसीलिए ईश्वर के नाम पर जनसंहार हो रहा है, धार्मिक ठगी हो रही है, पाखण्ड हो रहा है । शायद ईश्वर के नाम पर बहाया गया मनुष्य एवं जानवरों का रक्त, जो अभी भी बदस्तूर जारी है, अन्य किसी भी कारण से बहाये गए रक्त से मात्रा में ज्यादा है। इसीलिए पवित्र यीशु कहते हैं–''मैं और पिता एक हैं।'' अर्थात् दो नहीं हैं। यह अद्वैत वेदान्त की प्राचीनतम मानव–प्रज्ञा है। ईश्वर को क्रूस पर चढ़ाकर दो हजार वर्षों से झुलाया जा रहा है। आज भी यीशु को सर्वत्र चर्चों में, बैठकखानों में, कारों में, छाती पर झुलाया जा रहा है ताकि आत्मदीनता, पापबोध एवं विश्वास पद्धतियों पर मानसिक निर्भरता तथा उनके द्वारा दिए जाने वाले आश्वासन, पुरस्कार एवं दण्ड, जो कि विभेदकारी मानव–चेतना में लोभ एवं भय के रूप में रहता है, के प्रति 'मैं' सदा उपलब्ध रहे। इस 'मै' रूपी विभाजन से मुक्ति ही सबसे बड़ा प्रबोध है। सभी धर्मों में कई तरह के प्रतीकों एवं कहानियों के माध्यम से मगज–धुलाई जारी है। 'दूसरी' दुनिया के बारे में कोई भी कुछ भी नहीं जानता ड्रिगर भी तथाकथित 'पवित्र–ग्रन्थों' का सहारा लेकर तथाकथित 'पवित्र–लोग' तथा 'पवित्र विश्वासी भक्तगण' धर्म का पूरा गोरखधंधा चला रहे हैं और धर्म के नाम पर प्रवंचना यानी ठगी सतत जारी है। आप वाराणसी, भारत स्थित मेरे मन्दिर में आइए। वहाँ आप देखेंगे कि मन्दिर के भीतर ऊपरी पंक्ति में हृष्ट–पुष्ट योगी के रूप में यीशु का एक बड़ा चित्र टँगा है। वहाँ सूली पर झूलता हुआ चित्र नहीं है । दिव्यता का भारतीय प्रतीक 'कृष्ण' है जो आनन्दपूर्ण अस्तित्व का प्रतीक है न कि दुःख भोग का । क्रियायोग में हमलोग आध्यात्मिक मंडी में मिलनेवाली तथाकथित धार्मिक पुस्तक पढ़ने के बदले ''मैं'' और उसकी आत्मकेन्द्रित गतिविधियों को देखने का सुझाव देते हैं।

स्था. पु.–(सद्‌बुद्धि के साथ)–मैं जाने की अनुमति चाहता हूँ । आइये, हमलोग एक–दूसरे को गले लगायें।

जय सत्यचरण ।

(शिवेन्दु के पिता तथा क्रियायोग में दीक्षा देने वाले आध्यात्मिक गुरु ।)

क्रियायोग सांख्य–योग–वेदान्त का सारतत्व है ।